International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 2; Issue 5; September 2016; Page No. 31-33

'रेत' : कंजर जनजाति की संघर्ष–गाथा

गणेश दयाराम शेकोकार

असिस्टेंट प्रोफेसर (हिंदी), एच0 पी0 टी0 आर्टस् अँड आर0 वाय0 के0 सायन्य कॉलेज, नासिक, महाराष्ट्र, भारत।

प्रस्तावना

हिंदी कथा–साहित्य में भगवानदास मोरवाल द्वारा रचित साहित्य अपनी देशज छवि के कारण विशेष रूप से जाना जाता है। इनका लिखा हुआ उपन्यास 'रेत' सन् 2008 में प्रकाशित हुआ और हिंदी साहित्य–समीक्षा जगत् में पर्याप्त चर्चा में भी रहा है। इस उपन्यास की कथा के केंद्र में है–हरियाणा राज्य का एक गाँव–'गाजूकी'। गजूकी गाँव के 'कमला सदन' के माध्यम से लेखक ने 'कंजर' जनजाति का रहन–सहन और संघर्षपूर्ण जीवन–यापन उपन्यास में प्रस्तुत किया है। 'कंजर' याने काननचर अर्थात् जंगल में घूमने वाला। यह वही कंजर हैं जो स्वयं को माना गुरू और माँ नलिन्या की संतान मानते हैं। 'कंजर' ऐसी जनजाति है, जो ब्रिटिश शासनकाल के दौरान 'अपराधी जनजाति' करार की गई थी। सन् 1886 से 1924 के बीच अंग्रेज कानूनविद् जेकिन्स, सर अलैक्जेण्डर कारड्यू और सर जेम्स क्रेशर ने इनके लिए बनाए गए कानून में हस्तक्षेप किया, उसमें संशोधन किया तथा अंत में इस अपराधी जनजाति कानून को अत्याधिक कठोर बनाया गया। इसका कारण यह था कि "1840 में इन जनजातियों पर भीषण अपराध करने का पहली बार शक किया गया।"[1]

ध्यातव्य है कि क्रिमिनल टाइब्स एक्ट 1924 के तहत सरकार ने 43 जरायम–पेशा जनजातियाँ घोषित की थीं। जिनमें से एक जनजाति है–'कंजर'। अपराधी जनजाति करार की गई यह जनजाति स्वतंत्रता के उपरांत भी उसी त्रासदी को भोग रही है जो ब्रिटिश शासनकाल में थी, इसकी प्रतिति उपन्यास के पठन के उपरांत हो जाती है।

उपन्यासकार ने 'कमला सदन' के माध्यम से अपने लोक विश्वासों व लोकाचारों की धूरी पर अपनी अस्मिता और अस्तित्व के लिए संघर्ष करती विमुक्त जनजाति की कथा प्रस्तुत की है। इस उपेक्षित जनजाति के लोग वेश्यावृत्ति अपनाकर तथा शराब (कंजर व्हिस्की) बनाने का व्यवसाय आदि कर किसी प्रकार अपना जीवन–निर्वाह करते हैं। यह एक स्त्री–प्रधान जनजाति है। "कंजर जनजाति की अधिकांश स्त्रियाँ वेश्यावृत्ति अपनाकर अपना जीवन–यापन करती हैं।"[2]

परिवार की वे सभी युवतियाँ जो वेश्यावृत्ति का व्यवसाय अपनाती हैं, 'बूआ' कहलाती हैं, तथा इन बूआओं की चाकरी करने का कार्य करने वाली होती हैं–'भाभी'। कमला सदन में बुआ और भाभी दोनों पर 'हुस्न बाग' (गुटका) के किनकों को मुँह में चुबलाती 'कमला बुआ' का वर्चस्व है, और उसी की देखरेख में परिवार की अन्य युवतियों द्वारा देह–व्यापार का यह कार्य किया जाता है। बुआ बनकर ऐशो–आराम की जिंदगी प्राप्त होती है, इसीलिए एक ओर सुशीला बुआ अपनी पोती 'पिंकी' को डॉक्टर बनाने का स्वप्न देखती है, तथा दूसरी ओर किशोरी पिंकी कमला सदन की अन्य बुआओं के मौज मजे और अपनी माँ संतो भाभी की तुलना करती है, तो बुआ बनना अधिक पसंद करती है। रूक्मिणी द्वारा पिंकी को यह पूछे जाने पर कि वह डॉक्टर बनेगी, टीचर बनेगी या बुआ? पिंकी का उत्तर होता है–"मैंतो बुआ बनुँगी।"[3] अपने इस उत्तर को और अधिक पुष्ट करने के लिए पिंकी कहती है–"बुआ रोज अच्छे–अच्छे कपडे पहनती है। लेटकर टीवी देखती है और...बुआ के पास जो अंकल आते हैं न वो कितना रूपया देकर जाते हैं।"[4]

भाभी बनकर घर बसाने से क्या हासिल होना है? क्योंकि भाभी का काम है घर की दूसरी बुआओं (खिलावडियों) की सेवा टहल करना तथा दिनभर घर के काम–काज में खटना। न पहनने का सुख और न ओढने का। उपन्यास की पात्र 'संतो भाभी' कमला सदन में भाभी बनकर इसी प्रकार का शापित जीवन जी रही है। अपने ही परिवार के अन्य लोगों द्वारा संतो भाभी का शोषण किया जा रहा है।

इन खिलावडियों के लगे बँधे ग्राहक 'कज्जा' कहलाते हैं। कज्जा वह होता है, जो अपनी मनपसंद खिलावडी के पास चाहे जिस समय आ–जा सकता है। वह कज्जा जो किसी खिलावडी की पहले–पहल 'मत्था ढकाई' करता है, कमला सदन में उसे घर के दामाद की तरह मान–सम्मान दिया जाता है। इसका कारण यह है कि मत्था ढकाई के समय उससे मोटी रकम पहले ही वसूल कर ली गई होती है।

वेश्यावृत्ति का यह व्यवसाय चाहकर भी कोई खिलावडी नहीं छोड सकती, क्योंकि तथाकथित इज्जतदार (सभ्य समाज) इन खिलावडियों को अपनाने के लिए तैयार नहीं होता। वैद्यजी के रूक्मिणी को यह धंधा छोडकर घर बसाने का आग्रह करने पर वह कहती है–"बैद्जी, इज्जतदार कोई मिलेगा नहीं और कंजर कोई करेगा नहीं। वैसे भी ब्याह करके कौन–सा सुख मिलना है। सुना नहीं भाभी ने क्या कहा था। इसलिए बुआ बने रहने में ही भलाई है बैद्जी। भाभी बनने में क्या रखा है।"[5]

कंजर जनजाति में अच्छे नैन–नक्श वाली लडकियों का ब्याह करके उनका घर नहीं बसाया जाता। और जहाँ कहीं एखाद अपवाद हो भी जाए तो लडकेवालों को देहेज देने के स्थान पर उनसे दहेज वसूल किया जाता है, वास्तव में यह दहेज की रकम वह रकम होती है, जो लडकी खिलावडी बनकर सारी उम्र कमा सकती है।

कंजरों का शोषण मात्र इज्जतदारों द्वारा ही नहीं बल्कि प्रशासन व्यवस्था के द्वारा भी किया जाता है। प्रत्येक खिलावडी की थाने में रजिस्ट्री की जाती है। प्रशासन ने रजिस्ट्रीशुदा कंजरों की जिम्मेदारी गाँव के मुखिया को सौंपी है–"बिना इजाजत या इत्तिला दिये कोई कंजर गाँव छोडकर नहीं जा सकता...और जाता है तो मुखिया को इसकी जानकारी होनी चाहिए, जिसकी इत्तिला मुखिया को थाने में देनी होती है।"[6] कंजरों का यह व्यवसाय उनके अपने कायदे–कानून पर चलता है। उनके आपसी विवादों को गाँव की पंचायत द्वारा सुलझाया जाता है। पंचायत का निर्णय दोनों पक्षों को स्वीकार करना होता है। जो मसला पंचायत में जाता है, पंचायत द्वारा उस पर विचार–विमर्श करने के लिए धरोड के रूप में मोटी रकम ऐंठ ली जाती है, तथा इस धरोड का जिक्र कोई भी पुलिस के सामने न कर सके इसलिए दोनों पक्षों को उनके कुल देवता की सौगंध दिलाकर चेतावनी दी जाती है।

पंचायत केवल आर्थिक शोषण ही नहीं करती अपितु खिलावडियों को ऐसा मानसिक दंड भी देती है जिससे इस प्रकार का अपराध पुनः कोई खिलावडी करने का साहस न करे। माया द्वारा अपनी सगी बहन का लगा–बँधा ग्राहक तोडने पर पंचायत उसके विरूद्ध

फैसला सुनाती है कि एक महिने तक उसके पास कोई कज्जा भटकने नहीं दिया जाएगा तथा "साथ ही पंचों ने यह फैसला लिया है कि अपनी सगी बहन का लगा–बँधा कज्जा तोडने के अपराध में माया के माथे के ऊपर के बाल काटने का हुकम दिया जाए।"[7]

कंजरों का यह व्यवसाय सुचारू रूप से चलता रहे, इसलिए पुलिस को समय–समय पर उनका हिस्सा पहुँचा दिया जाता है। थानेदार के द्वारा अचानक दबिश का प्रोग्राम बनाया जाता है, इस दबिश के दौरान कभी तो कोई खिलावडी और कभी–कभी कोई कज्जा पुलिस के हत्ते चढ जाता है। और यदि कुछ हासिल न हुआ तो कंजरों की पहले तोड वाली कंजर व्हिस्की की कुछ बोतलें तो बनती ही हैं। हवलदार रामसिंह, थानेदार को कंजर व्हिस्की की विशेषताएँ बताते हुए कहता है–"हाँ जनाब, वह भी पहले तोड की। जनाब, जो मजा पहले तोड में है, वह दूसरे तोड में कहाँ। पहले तोड की तो जनाब इतनी गजब की चीज होती है कि मगज घुमाने के लिए स्साली का एक ही पटियाला पैग बहुत है।"[8]

दबिश के दौरान गिरफ्तार किए गए कज्जा एवं खिलावडियों से पुलिस जमानत के तौर पर मोटी रकम वसूल करती है। तात्पर्य यह है कि पुलिस की लालची, मौका परस्त एवं स्वार्थवृत्ति के सामने अक्सर कंजरों को नतमस्तक होना पडता है।

शोषण का यह चक्र प्रशासन व्यवस्था तक ही सीमित नहीं रहता । इसका एक अन्य पहलू राजनीति भी है। कथित समाज के ठेकेदार जो स्वयं को 'नेता' कहलवाते हैं, वे ही वास्तव में शोषकों की शृंखला की महत्वपूर्ण कडी हैं। भाँति–भाँति के प्रलोभन देकर जनता को बहकाना और जनता के ही वोटों के बल पर सत्ता प्राप्त करना आज–कल के नेताओं का पेशा बन चुका है।

उपन्यास के उत्तरार्ध में नायिका रूक्मिणी का संपर्क राजनीतिक दल की एक कार्यकर्ता–सावित्री से होता है। सावित्री, राजनेता मुरली बाबू की पार्ट के लिए काम करती है। वही रूक्मिणी को मुरली बाबू से मिलाती है। मुरली बाबू रूक्मिणी को प्रलोभन देकर उसका दैहिक शोषण करना चाहते हैं। मुरली बाबू ने 'जनजाति महिला प्रकोष्ठ' के गठन का प्रस्ताव अपनी पार्टी के वरिष्ठ कार्यकर्ताओं के समक्ष रखा है, जिसकी प्रदेशाध्यक्ष वह रूक्मिणी को बनाना चाहते हैं। मुरली बाबू रूक्मिणी से कहते हैं–"अब दिक्कत यह है कि मुझे कुछ जनजाति महिलाओं की जरूरत पडेगी। इसलिए सोचा कि इस काम के लिए तुझसे अच्छी महिला और कौन हो सकती है, जिसके हाथों में इसकी बागडोर सौंपी जाए।"[9] परंतु जब रूक्मिणी को मुरली बाबू के इरादों का पता चलता है, तो वह उसका विरोध करती है। रूक्मिणी को इस रहस्य का भी पता चलता है कि मुरली बाबू के लिए औरतों की दलाली करने वाला कोई और नहीं, वह तो औरतों के हक की ठेकेदार सावित्री जैसी औरतें ही होती हैं। स्वयं मुरली बाबू इस रहस्य का उद्घाटन करते हुए रूक्मिणी से कहते हैं–"...आज तुम जैसी औरतों के हकों की सबसे बडी ठेकेदार यही सावित्रियाँ बनी हुई हैं। इतिहास में नाम भी इन्हीं का दर्ज होता है। औरतों की मुक्ति का शोर यही क्रांतिकारी पतिव्रताएँ सबसे ज्यादा मचाती हैं। तुझे क्या लगता है जिस बहाने से तुझे आज यहाँ लाया गया है, उसकी योजना मैंने बनाई है? ना, यह सारी योजना इसी की बनाई हुई है।"[10]

उपन्यास में नाटकीय मोड तब आता है, जब राजनीति के दलदल में धीरे–धीरे धँसती रूक्मिणी स्वयं राजनीतिक दाँव–पेंच सीख लेती है। मुरली के कुकर्मो की सीडी बनवाकर रूक्मिणी मीडिया में दे देती है। मीडिया में "अश्लील सीडी प्रकरण में फँसे मुरली की बंसी रूक्मिणी ने चुराई"[11] इस प्रकार की खबरों को खूब उछाला जाता है। परिणामस्वरूप चुनाव के लिए पार्टी द्वारा मुरली बाबू के स्थान पर रूक्मिणी को प्रत्याशी घोषित किया जाता है।

रूक्मिणी जैसी एक खिलावडी को राजनीतिक दल द्वारा अपना चुनावी प्रत्याशी घोषित करने पर तथाकथित समाजिक संगठनों को भी रूक्मिणी का पक्षधर होना पडता है। रूक्मिणी चुनाव में विजयी होती है, परंतु तथाकथित सभ्य एवं इज्जतदार समाज उसकी विजय को हृदय से नहीं अपनाता। रूक्मिनी द्वारा उपमंत्री के रुप में शपथ लेने के अवसर पर सामने बैठा इज्जतदार समाज उसकी चुनावी रणनीति की मन नही मन आलोचना करते हुए उसे धोखघडी का नाम देता है। "भद्र समाज में अगर कोइ भद्र, अभद्र राजनीति करे तो इसे राजनीतिक पैंतरे के रुप में देखा जाता है और कोइ अभद्र इस तरह के कार्य को अंजाम देता है तो इसे घिनौना कार्य। ये ही नहीं रातनीति में अगर कोइ अभद्र अपनी जगह बना भी लेता है तो वह भद्र समाज को रास नहीं आता। न तो इनका राजनीति में आना और न ही इनके राजनीति करने के तरीके।"[12] तात्पर्य यह है कि, भद्र समाज रूक्मिनी खिलावडी के प्रातिनिधिक राजनीतिक पदार्पण और हस्तक्षेप से वर्चस्ववादी समाज नाखुष है। क्योंकि वह जिस समात का प्रतिनिधित्व कर रही है, उसका राजनीति में प्रवेष वर्चस्व रखने वाले समाज के लिए चुनौती है। उस समाज के मुख्यधारा में समाविष्ट होने की दिषा में हुई इस पहल से भद्र समाज आतंकित हो जाता है।

निष्कर्षतः

यह कहा जा सकता है कि, 'रेत' उपन्यास के माध्यम से मोरवाल ने कंजर समाज के अंतर्बाह्य पक्षों को उजागर करने के साथ–साथ उनके शोषण एवं संघर्ष की अभिव्यक्ति की है। यह एक उपेक्षित समाज है, इसीलिए कंजरों का विविध स्तरीय संघर्ष एवं शोषण लगातार चला आ रहा है। उपन्यास में कंजर जनजाति के माध्यम से भारतीय ग्रामीण समाज के कईं रहस्यों का उद्घाटन करने का प्रयास लेखक ने किया है। भारत जैसे विकासशील राष्ट्र में ग्रामीण जनता के व्यवहार ग्रामीण परिवेश और उनकी मानसिक स्थिति को लेकर समाज में जागरूकता पैदा करने के प्रयास किये जा रहे हैं। "यह नितांत आवश्यक है कि हम ग्रामीण जनता को समझें उनकी आवश्यकता और मनःस्थिति का ज्ञान प्राप्त करें तथा ग्रामीण समाज की समस्याओं के निदान में समाजशास्त्रीय योग के मूल्य को स्वीकारें।"[13] ग्रमीण एवं उपेक्षित समाज मुख्यधारा में आने के लिए तथा कंजरों जैसी अनेकों जनजातियाँ अपने अस्तित्व एवं अपनी उपस्थिति दर्ज कराने को प्रयत्नषील है, परंतु वर्चस्ववादी मानसिकता के कारण उन्हें पर्याप्त अवसर प्राप्त नहीं होते। परिणामस्वरुप यह समाज मुख्यधारा में समाविष्ट नहीं हो पाता। इसीलिए आलोच्य उपन्यास में कंजर समाज अपनी उपेक्षित सामाजिक स्थिति को अधिकारिक रुप से भद्र समाज के समानांतर स्थापित करने की चेष्टा कर रहा है। भारत में इस प्रकार की कईं जनजातियाँ हैं जो कुत्सित जीवन जीने को बाद्ध्य हैं, क्योंकि प्रशासन, समाज एवं राजनीतिक दलों द्वारा उनका शोषण निरंतर होता आ रहा है।

संदर्भ सूची

1. रेत, भगवानदास मोरवाल, वाणी प्रकाषन, नई दिल्ली, सं0 2008, पृ0 48।
2. रेत, भगवानदास मोरवाल, वाणी प्रकाषन, नई दिल्ली, सं0 2008, पृ0 208।
3. रेत, भगवानदास मोरवाल, वाणी प्रकाषन, नई दिल्ली, सं0 2008, पृ0 11।
4. रेत, भगवानदास मोरवाल, वाणी प्रकाषन, नई दिल्ली, सं0 2008, पृ0 12।
5. रेत, भगवानदास मोरवाल, वाणी प्रकाषन, नई दिल्ली, सं0 2008, पृ0 13।
6. रेत, भगवानदास मोरवाल, वाणी प्रकाषन, नई दिल्ली, सं0 2008, पृ0 51।

7. रेत, भगवानदास मोरवाल, वाणी प्रकाषन, नई दिल्ली, सं0 2008, पृ0 90।
8. रेत, भगवानदास मोरवाल, वाणी प्रकाषन, नई दिल्ली, सं0 2008, पृ0 47।
9. रेत, भगवानदास मोरवाल, वाणी प्रकाषन, नई दिल्ली, सं0 2008, पृ0 175।
10. रेत, भगवानदास मोरवाल, वाणी प्रकाषन, नई दिल्ली, सं0 2008, पृ0 193।
11. रेत, भगवानदास मोरवाल, वाणी प्रकाषन, नई दिल्ली, सं0 2008, पृ0 292।
12. सृजन संदर्भ, (संपा.) सतीष पांडेय, मुंबई, जन.–जून 2015, *'विवषता की दास्तानों के दामन'*, डॉ. लोकेष कुमार गुप्ता, पृ0 37–38।
13. ग्रामीण एवं नगरीय समाजशास्त्र, डॉ. ओम प्रकाश जोशी, विष्वभारती प्रकाषन, नई दिल्ली, सं0 2011 पृ0 7।